"सेंटिनल" (गुवाहाटी)

लातीनी अमेरिका : अब बारी क्यूबा की है ?

१९८९ इस दशक के अत्यंत महत्वपूर्ण वर्ष के रूप में मिसाल के तौर पर याद किया जाएगा, जिसके दौरान विश्व स्तर पर क्रांतिकारी परिवर्तनों का उबाल देखने में आया और खासकर यूरोप का तो मानो बिल्कुल कायापलट ही हो गया।

एक ओर जहां पूर्वी यूरोप की जनता ने वर्षों से चली आ रही समाजवाद के नाम पर निरंकुशता का चोगा एक ही साथ उतार फेंका, वहीं दूसरी ओर जर्मन एकीकरण की बात भी इतनी जोरशोर से चल रही है कि पुनः पूर्व और पश्चिम जर्मनी मिलकर द्वितीय विश्व युद्ध से पहले का जर्मनी हो जायेगा। इस नई फ्रेशकश ने पश्चिम जगत में हलचल मचा रखी है। पश्चिम जर्मनी के चांसलर हेल्मुट ओल का अभी एकमात्र लक्ष्य जर्मन एकता है और उसके लिए वे दिनरात एक हुए हैं। पूर्व जर्मनी का चुनाव (६ मार्च) होना था, इसलिए वे रुके थे, अब पुनः सक्रिय हो गये हैं क्योंकि बॉन में बहुमत सुधारवादियों को मिला है।

लातीनी अमेरिका और मध्य अमेरिका में भी इस उबाल का असर पड़े बिना नहीं रह सका। इसका जीता-जागता सबूत निकारागुआ के रूप में हमारे सामने मौजूद है। ९० वर्षों के एकछत्र सैंडिनिस्ता राज के बाद अमेरिकी दबाव के आगे राष्ट्रपति डैनियल ओर्टीगा ने वहां चुनाव कराया और वे जनता का विश्वास प्राप्त करने में असफल रहे। जिस प्रकार जनरल ओर्टीगा को कम्युनिस्ट देशों (खासकर सोवियत संघ और क्यूबा) से समर्थन प्राप्त था उसी प्रकार किसी गठबंधन को भी अमेरिका का वरदहस्त मिला हुआ था और कोंत्रा विद्रोहियों की ओर से सैनिक मदद भी। कोंत्रा का भी आका अमेरिका है। दोनों ही पक्षों ने मतदाताओं को अपने-अपने पक्ष में करने के लिए कोई कसर बाकी नहीं रखी, इसलिए इसे हर हालत में जनता का फैसला कहा जा सकता है और ओर्टीगा ने भी तदनुसार पद त्यागने की घोषणा करके जनता की अदालत में अपनी साख बनायी है। यह कहकर जनतांत्रिक अधिकारों की मांग की उपेक्षा नहीं की जा सकती कि अमेरिका ने अपने उम्मीदवार चेमोटो को जिताने के लिए सारे हथकंडे अपनाये। अमेरिका ने जो कुछ किया, चलिए उसे मान लेते हैं लेकिन इससे यह तथ्य झुठलाया नहीं जा सकता कि डैनियल ओर्टीगा के नेतृत्व में कम्युनिस्ट सैंदिनिस्ता सरकार ने अपना अस्तित्व बचाने की होड़ में देश की पूरी अर्थव्यवस्था को एकदम से तहस नहस करके रख दिया जिससे उबरने में आनेवाली सरकार को शायद वर्षों लग जाएं।

यह बात सही है कि अपने आजू-बाजू में कम्युनिस्टों का वर्चस्व अमेरिकी शासकों को कांटे की तरह खटकटा रहा है और वे उनका तख्ता पलटने के लिए हर संभव कोशिश करते रहे हैं। कुछ तो कम्युनिस्ट शासकों की अपनी काबिलियत और उससे ज्यादा सोवियत संघ का पीठ पर हाथ होने की वजह से अमेरिका को अब तक कामयाबी नहीं मिल पा रही थी।

हाल तक पूर्वी यूरोप से लेकर लातीनी और मध्य अमेरिका तक सोवियत संघ का प्रभाव था, बल्कि यों कहें कि यूरोप के पश्चिमी खेमे की कमान अमेरिका के हाथ में तथा दूसरे छोर का नेता सोवियत संघ था, अमेरिका की प्रतिद्वंद्विता अपने-अपने प्रभाव क्षेत्र बढ़ाने की वजह से ही सोवियत संघ से रही है।

जब कम्युनिस्ट महाशक्ति (सोवियत संघ) की अपने प्रभाव वाले देशों पर पकड़ ढीला पड़ने लगी और देश के अंदर भी स्वायत्तता के लिए जोर-शोर से आन्दोलन शुरू हो गये तो अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज बुश ने मौके का फायदा उठाकर जो कर दिखाया उनके पूर्ववर्त नहीं कर सके थे। पिछले वर्ष दिसंबर में पनामा में सेना भेज कर जनरल नोरिएगा को हटाना उस दिशा में पहला कदम था। वहां भी नोरिएगा सेना से आए थे और कम्युनिस्ट सरकार के झंडे के नीचे उन्होंने तानाशाही कायम कर रखी थी। हालांकि इसे अमेरिका की दखलंदाजी का नाम दिया गया लेकिन सच्चाई यह है कि पनामा की जनता नोरिएगा की मनमानी से ऊब चुकी थी और लोगों ने इस सत्तापलट को पसंद किया।

इधर बगल में निकारागुआ पर तो जॉर्ज बुश की नजर टिकी थी ही, जहां अपने अनुकूल स्थिति बनाने के लिए पिछले दस वर्षों से अंतर्राष्ट्रीय माहौल तैयार करने की अमेरिकी शासकों की लॉबी काम कर रही है और निकारागुआ के पड़ोस में स्थित होंडुयस के माध्यम से कोंत्रा छापाकारों को चोरी-छिपे मदद दी जा रही है जो सैंदिनिस्ता सरकार को बलपूर्वक अपदस्थ करने के लिए संघर्षरत हैं। सत्ता के इस खूनी संघर्ष में अब तक २५ हजार से ज्यादा लोगों की जानें गयीं और सैंदिनिस्ता सरकार को गद्दी छोड़नी पड़ी। संयुक्त राष्ट्र समेत विश्व के तकरीबन तमाम जनतांत्रिक देशों के दबाव के आगे डैनियल ओर्टीगा को झुकना पड़ा और आखिरकार उन्होंने चुनाव की घोषणा की और जनता ने उन्हें तरकिनार कर दिया।

निकारागुआ के चुनाव परिणाम का सीधा असर पड़ा क्यूबा पर, जो डैनियल ओर्टीगा का सबसे प्रबल समर्थक और मददगार रहा है। क्यूबा के राष्ट्रपति फिदेल कास्त्रो ने अपने सैनिक और हथियार भेजकर श्री

वैसे क्यूबा में सेना और हथियार की बदौलत तख्तापलट करना जरा कठिन है। जब क्यूबा की बदौलत उछल-कूद मचाने वाली सैंदिनिस्ता सरकार को हटाना सेना की मदद से संभव नहीं हो सका तो क्यूबा तो खैर, ताकत और मजबूत हैसियत वाला देश है। इसलिए वहां परिवर्तन का माहौल तैयार करने के लिए अमेरिका की ओर से जोरदार अभियान चलाया जा रहा है। अमेरिकी राजनयिकों ने जनता की कमजोर नस को पकड़ा है और इस कोशिश में लगे हैं कि क्यूबा में भी फिदेल कास्त्रो के खिलाफ मोर्चाबंदी की जा सके।

शशिधर खां

ओर्टीगा के अस्तित्व की रक्षा में बड़ी महती भूमिका निभायी है। अब लातीनी अमेरिका में क्यूबा ही एकमात्र कम्युनिस्ट देश है, जहां ३० वर्ष पहले खूनी क्रांति की बदौलत फिदेल कास्त्रो ने सत्ता हाथ में ली और उनका दावा है कि आज की सत्ता पर जनता की पकड़ बरकरार है।

वैसे क्यूबा में सेना और हथियार की बदौलत तख्तापलट करना जरा कठिन है। जब क्यूबा की बदौलत उछल-कूद मचाने वाली सैंदिनिस्ता सरकार को हटाना सेना की मदद से संभव नहीं हो सका तो क्यूबा तो खैर, ताकत और मजबूत हैसियत वाला देश है। इसलिए वहां परिवर्तन का माहौल तैयार करने के लिए अमेरिका की ओर से जोरदार अभियान चलाया जा रहा है। अमेरिकी राजनयिकों ने जनता की कमजोर नस को पकड़ा है और इस कोशिश में लगे हैं कि क्यूबा में भी आर्थिक सुधारों को लेकर आन्दोलन छिड़े और विभिन्न गुटों को हथियार देकर फिदेल कास्त्रो के खिलाफ मोर्चाबंदी की जा सके। अमेरिका को अपनी इस चाल में कामयाबी मिल रही है, क्योंकि वह बखूबी समझ रहा है कि लिथुआनिया गणराज्य द्वारा अलग गणतंत्र की घोषणा कर देने की वजह से सोवियत संघ खुद परेशान है और बहुत परेशान न भी हो तो कम से कम क्यूबा को भरपूर मदद देने की स्थिति में तो कतई नहीं है।

अमेरिका ने क्यूबा की सीमा से सटा-सटाकर काफी शक्तिशाली ट्रांसमीटर और टेलीविजन केन्द्र स्थापित कर रखा है, जिसके जरिए उसे क्यूबा की अंदरूनी गतिविधियों की पूरी जानाकारी मिल जाती है और क्यूबा की जनता को उन छूटों की विस्तृत तस्वीर देने में भी आसानी होती है जो पोलैंड, चेकोस्लोवाकिया, हंगरी और रूमानिया के लोगों को नये सुधारोन्मुख समाजवादी आन्दोलन के बाद मिल पायी है। फिदेल कास्त्रो ने हालांकि बड़ी दिलेरी से इसके खिलाफ कड़ी आपत्ति प्रकट की है, लेकिन जॉर्ज बुश को इससे कोई फर्क नहीं पड़ा है, बल्कि वे और भी ज्यादा सक्रिय हो गये हैं। क्योंकि उन्होंने मौजूदा परिस्थितियों का आकलन करने के बाद ही अपना हाथ-पांव फैलाया है। जॉर्ज बुश अच्छी तरह समझ रहे हैं कि सोवियत संघ समेत पूर्वी यूरोप के तमाम कम्युनिस्ट देशों की आर्थिक हालत डांवाडोल है उसमें भी क्यूबा की तो और भी ज्यादा, क्योंकि अब तक क्यूबा को सोवियत संघ के कहने पर पूर्वी यूरोपीय देशों से रियायती दर पर सामान मिला करते थे। अभी उनका अपना ही दिवाला निकल रहा है और सोवियत संघ भी इन देशों को इस बात के लिए दबाव डालने की स्थिति में नहीं है कि वे क्यूबा को बाजार से कम दर पर सामग्रियां बेचें। इसका परिणाम यह हुआ है कि क्यूबा में त्राहि-त्राहि मची हुई है। आवश्यक वस्तुओं की बेहद कमी महसूस की जा रही है। फिदेल कास्त्रो स्वयं महसूस कर रहे हैं कि उनके ३० साल के राजनीतिक जीवन में ऐसी विषद परिस्थिति पहले कभी नहीं आयी, लेकिन उसके बवजूद वे अपना तौर तरीका बदलने को तैयार नहीं है और लोग उनकी पुरानी घिसी-पिटी साम्यवाद के नाम पर तानाशाही रवैये से ऊब चुके हैं। हर तरफ परिवर्तन की लहर है, जिसमें वस्तुओं का अभाव और अमेरिका द्वारा उकसाया जाना आग में घी का काम कर रहा है।

फिदेल कास्त्रो ने भी प्रकारान्तर से रूमानिया जैसी व्यवस्था कायम कर रखी है और अंतर्राष्ट्रीय प्रेक्षकों का अनुमान है कि कहीं उनका भी सेसेस्कू वाला हश्र न हो। चूंकि वहां एकमात्र कम्युनिस्ट पार्टी अस्तित्व में है जिसकी सरकार है और सर्वेसर्वा फिदेल कास्त्रो खुद है, इसलिए सेसेस्कू की तरह से सारे महत्वपूर्ण पदों पर उन्होंने अपने निकटतम सगे-संबंधियों को बिठा रखा है ताकि कहीं से कोई विद्रोह न होने पाये। सशस्त्र सैनिक मामलों के मंत्री उनके अनुज टॉल हैं। कास्त्रो की निजी खुफिया एजेंसी विटीटे का संचालन उनके एक और भाई के जिम्मे है। जॉर्ज बुश को इस बात की जानकारी है और उन्होंने कास्त्रो के घर में ही फूट डालने के लिए जासूसों का जाल बिछा रखा है, क्योंकि जो अधिकारी उनके संबंधी नहीं हैं, उनके अधिकार काफी सीमित हैं।

अमेरिका ने क्यूबा के खिलाफ अंतर्राष्ट्रीय लॉबी भी तैयार करनी शुरू कर दी है और फिदेल कास्त्रो हवा का रुख पहचानने के मूड में नहीं हैं। पिछले दिनों श्री कास्त्रो राष्ट्रपति फर्नेंडो फोलोर डीमेलो के शपथग्रहण समारोह में भाग लेने ब्राजील गये। पिछले ३० वर्षों में ब्राजील की वह उनकी पहली यात्रा थी, इसलिए गर्मजोशी से स्वागत करने के बाद फर्नेंडो समेत वेनेजुएला और स्पेन के राष्ट्रपतियों ने फिदेल कास्त्रो से अग्रह किया कि वे क्यूबा में शीघ्र चुनाव कराएं और अगर जनमत उनके खिलाफ जाता है तो शराफत से सत्ता से अलग हो जाएं। 'न्यूयार्क टाइम्स' ने उन दोनों नेताओं के हवाले से कहा है कि जिस नई समाजवादी क्रांति की लहर से पूर्वी यूरोप का कोई देश नहीं बचा, तो फिर फिदेल कास्त्रो कैसे बचे रह जाएंगे, जो पिछले ३० वर्षों से चुनाव का दिखावा करके स्वयं को ही बार-बार राष्ट्रपति चुनते रहे हैं ? अगर वे स्वेच्छा से चुनाव कराकर लोगों को उनके जनतांत्रिक अधिकार दे दें, तो शायद फिर से चुन लिए जायें, अन्यथा वो नौबत आने ही वाली है जब उन्हें मजबूर होकर सत्ता से अलग होना पड़ेगा।